लोकसभा में महिला आरक्षण विधेयक आवश्यकता, चुनौतियाँ और प्रभाव

प्राप्तिः 06.04.2026
स्वीकृतः 11.06.2026

30

डॉ शरद रॉय
सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान विभाग)
मुरारका महाविद्यालय, सुलतानगंज
ति.मा.भा.वि. भागलपुर
ईमेलः *drsharadroy@gmail.com*

सारांश

भारत में महिलाओं के लिए आरक्षण की नीति उन असंख्य महिलाओं के लिए आशा की एक किरण बनकर उभरी है, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रखा गया है और जिनका प्रतिनिधित्व कम रहा है। महिला आरक्षण अधिनियम, 2023 और हाल ही में हुए संवैधानिक संशोधन के बाद इस नीति पर चर्चाओं में काफी तेजी आई है। आरक्षण का उद्देश्य महिलाओं को सशक्त बनाना और उनके राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बेहतर बनाना है, लेकिन वास्तविकता अक्सर इससे कहीं अधिक जटिल परिदृश्य को दर्शाती है। इस मूल्यांकन का उद्देश्य आरक्षण नीति की उपलब्धियों को उजागर करना और साथ ही मौजूदा चुनौतियों का समाधान करना है। स्थानीय प्रशासन में उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद, कई महिलाएं सामाजिक–आर्थिक असमानताओं और सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों जैसी व्यवस्थागत बाधाओं का सामना करती हैं, जो सार्वजनिक जीवन में उनकी पूर्ण भागीदारी को सीमित करती हैं। न्यायपालिका ने इन कानूनों की व्याख्या करने और समानता के सिद्धांतों को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन न्यायिक हस्तक्षेप और कानून के मूल उद्देश्य के बीच संतुलन को लेकर चिंताएं अभी भी बनी हुई हैं। महिला आरक्षण के निहितार्थों को पूरी तरह समझने के लिए, इसके ऐतिहासिक संदर्भ का अध्ययन करना आवश्यक है। प्रारंभिक नारीवादी आंदोलनों से लेकर समकालीन विधायी पहलों तक की यात्रा भारत में महिलाओं के अधिकारों के बदलते परिदृश्य की बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती है। यह शोधपत्र इस अधिनियम के कानूनी ढांचे और महिलाओं के जीवन पर इसके प्रभाव का सूक्ष्म परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, जिसमें इस दौरान सामने आए संघर्षों और सफलताओं दोनों को प्रतिबिंबित किया गया है। अंततः, भारत में महिला आरक्षण का भविष्य निरंतर वकालत और जमीनी स्तर के आंदोलनों पर निर्भर करता है। ये प्रयास वास्तविक सशक्तिकरण को बढ़ावा देने और यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं कि आरक्षण का वादा देश भर की महिलाओं के जीवन में वास्तविक परिवर्तन में तब्दील हो। आगे बढ़ते हुए,

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.030

महिलाओं के सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान करने के साथ–साथ अब तक हासिल की गई प्रगति का जश्न मनाने में सामुदायिक भागीदारी और सहयोग के महत्व को पहचानना महत्वपूर्ण है।

मुख्य शब्द

आरक्षण, महिलाएं, सशक्तिकरण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, प्रणालीगत बाधाएं, न्यायपालिका, जमीनी स्तर के आंदोलन।

परिचय

भारत में लैंगिक समानता का संघर्ष ऐतिहासिक अन्याय और सामाजिक बाधाओं से भरा एक लंबा और जटिल संघर्ष रहा है। इस संघर्ष का एक उल्लेखनीय पहलू राजनीतिक प्रतिनिधित्व में महिलाओं के लिए आरक्षण की मांग है– एक ऐसी नीति जिसका उद्देश्य ऐतिहासिक असमानताओं को दूर करना और शासन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देना है। महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने के उद्देश्य से संवैधानिक प्रावधानों और विधायी प्रयासों के बावजूद, कई महिलाएं अभी भी राजनीतिक चर्चा और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में हाशिए पर हैं। यह शोधपत्र भारत में महिलाओं के आरक्षण की जटिलताओं का गहराई से विश्लेषण करता है इसके ऐतिहासिक संदर्भ, कानूनी ढांचे सामाजिक चुनौतियों और जमीनी स्तर के आंदोलनों द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालता है। आरक्षण का तात्पर्य अक्सर सार्वजनिक सेवा क्षेत्र और शिक्षा के अवसरों में आवंटित सीटों से होता है। यहां तक कि कानून में भी इसे जनसंख्या के एक विशेष वर्ग के लिए निर्धारित किया जाता है। भारत में लैंगिक समानता का संघर्ष एक गहरा और जटिल संघर्ष है, जो सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक चुनौतियों के एक लंबे इतिहास से चिह्नित है। राज्य द्वारा आरक्षण की नीति का पालन जनसंख्या के एक विशेष वर्ग के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के लिए किया जा रहा है। इस संघर्ष के केंद्र में महिलाओं के लिए आरक्षण नीति है, जो ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने और शासन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए बनाई गई एक विधायी पहल है। समाज में अपने उचित स्थान के लिए संघर्ष करते हुए महिलाओं के लिए यह नीति समानता की खोज में एक महत्वपूर्ण साधन बनकर उभरी है।

महिला आरक्षण विधेयक की शुरूआत, जिसका उद्देश्य संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33% सीटें आरक्षित करना है, महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। हालांकि, इस लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग बाधाओं से भरा रहा है। 1950 में अपनाए गए भारतीय संविधान ने अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार) और अनुच्छेद 15 (भेदभाव का निषेध) के तहत महिलाओं के लिए समान अधिकारों और अवसरों की गारंटी देकर लैंगिक समानता की नींव रखी। (1.)1992 में ऐतिहासिक 73 वें और 74 वें संवैधानिक संशोधनों ने स्थानीय स्वशासन निकायों (पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों (में महिलाओं के लिए 33% सीटें आरक्षित करना अनिवार्य कर दिया। (2) यह जमीनी स्तर पर महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण कदम था और उच्च विधायी स्तरों पर आरक्षण के लिए आंदोलन का अग्रदूत बना।

आरक्षण नीति के वादों के बावजूद, कई महिलाएं आज भी राजनीतिक जीवन में हाशिए पर ही हैं। जागरूकता की कमी, सामाजिक सोच और कानूनों के अपर्याप्त कार्यान्वयन जैसे मुद्दे प्रगति में बाधा डालते हैं। यह शोधपत्र ऐतिहासिक संदर्भ, कानून और न्यायपालिका की महत्वपूर्ण भूमिका और भारत में महिला आरक्षण से संबंधित चल रही चर्चा पर ध्यान केंद्रित करते हुए इन पहलुओं का विस्तार से विश्लेषण करता है। इस नीति का उद्देश्य उन सभी लोगों का सामाजिक उत्थान करना है जो अतीत में अवसरों से वंचित रहे हैं। जनसमुदायों तक यह उत्थान अनेक तरीकों से पहुंचाया जाता है। इनमें सबसे प्रमुख हैं छात्रवृत्तियां, निधियां, कोचिंग और अन्य कल्याणकारी योजनाएं। मूल रूप से, आरक्षण नीतियां 1951 से 1961 तक एक दशक के लिए केवल अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST) के लिए ही बनाई गई थीं। हालांकि, इस प्रारंभिक ढांचे का लगातार विस्तार किया गया है। 1990 में मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू होने के बाद, आरक्षण प्रणाली को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया। इन विस्तारों के बावजूद, आरक्षण का लाभ मुख्य रूप से कुछ सीमित समुदायों या परिवारों को ही मिला है, जिससे अक्सर वास्तविक रूप से पात्र लोग हाशिए पर रह गए हैं। स्वतंत्रता के सात दशक बाद भी, आरक्षण की मांग और भी तीव्र हो गई है, जो निरंतर असमानताओं और अधिक न्यायसंगत दृष्टिकोण की आवश्यकता को उजागर करती है।

भारत में लैंगिक समानता के लिए संघर्ष एक लंबी लड़ाई रही है, जिसमें ऐतिहासिक अन्याय और सामाजिक बाधाएँ शामिल हैं। इस संघर्ष का एक खास पहलू राजनीतिक प्रतिनिधित्व में महिलाओं के लिए आरक्षण की मांग रही है – यह एक ऐसी नीति है जिसका मकसद ऐतिहासिक असमानताओं को दूर करना और शासन–प्रशासन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देना है। महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने के मकसद से बनाए गए संवैधानिक प्रावधानों और कानूनी प्रयासों के बावजूद, कई महिलाएँ आज भी राजनीतिक चर्चाओं और फैसले लेने की प्रक्रियाओं में खुद को हाशिए पर पाती हैं। यह शोध–पत्र भारत में महिलाओं के आरक्षण की जटिल बारीकियों को समझने की कोशिश करता है, इसमें इसके ऐतिहासिक संदर्भ, कानूनी ढाँचे, सामाजिक चुनौतियों और जमीनी स्तर के आंदोलनों द्वारा निभाई गई अहम भूमिका पर रोशनी डाली गई है। आरक्षण का मतलब अक्सर सार्वजनिक सेवा क्षेत्र और शिक्षा के अवसरों में कुछ सीटें आरक्षित करना होता है। यहाँ तक कि कुछ खास आबादी के लिए कानून बनाने में भी इसका इस्तेमाल होता है। भारत में लैंगिक समानता की लड़ाई एक गहरी जड़ें जमा चुकी लड़ाई है, जिसका एक लंबा इतिहास रहा है और जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक चुनौतियाँ शामिल हैं। राज्य द्वारा आरक्षण की नीति इसलिए अपनाई गई है ताकि आबादी के किसी खास तबके के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को सुधारा जा सके। इस लड़ाई के केंद्र में महिलाओं के लिए आरक्षण की नीति है – एक ऐसा कानूनी प्रयास जिसे ऐतिहासिक अन्यायों को दूर करने और शासन–प्रशासन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने के मकसद से तैयार किया गया है। जैसे–जैसे महिलाओं ने समाज में अपनी सही जगह पाने के लिए संघर्ष किया है, यह नीति समानता की उनकी इस खोज में एक अहम हथियार बनकर उभरी है।

आरक्षण नीति के वादों के बावजूद, कई महिलाएँ आज भी राजनीतिक जीवन के हाशिए पर ही खड़ी हैं। जागरूकता की कमी, सामाजिक सोच और कानूनों को ठीक से लागू न करना जैसी समस्याएं प्रगति में रुकावट डालती हैं। यह पेपर इन पहलुओं की विस्तार से जांच करना चाहता है,

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.030

जिसमें ऐतिहासिक संदर्भ, कानून और न्यायपालिका की अहम भूमिका, और भारत में महिलाओं के लिए आरक्षण को लेकर चल रही चर्चा पर खास ध्यान दिया गया है। इस नीति का मकसद उन सभी लोगों का सामाजिक उत्थान करना है, जिन्हें पहले मौके नहीं मिले थे। लोगों तक इसे पहुंचाने के कई तरीके हैं। इनमें सबसे खास हैं स्कॉलरशिप, फंड, कोचिंग और दूसरी कल्याणकारी योजनाएं देना। शुरू में, आरक्षण नीतियां खास तौर पर अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST) के लिए एक दशक के लिए बनाई गई थीं – 1951 से 1961 तक। हालांकि, इस शुरुआती ढांचे का लगातार विस्तार किया गया है। 1990 में मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू होने के बाद, आरक्षण व्यवस्था का दायरा बढ़ाकर इसमें अन्य पिछड़ा वर्गों (OBCs) को भी शामिल कर लिया गया। इन विस्तारों के बावजूद, आरक्षण का फायदा मुख्य रूप से कुछ ही समुदायों या परिवारों को मिला है, जिससे अक्सर वे लोग पीछे छूट जाते हैं जो असल में इसके हकदार हैं। आजादी के सात दशक बाद भी, आरक्षण की मांग और तेज ही हुई है, जो लगातार बनी असमानताओं और ज्यादा न्यायसंगत तरीके की जरूरत को उजागर करती है।

महिला आरक्षण के ऐतिहासिक पहलू

भारत में महिला आरक्षण की यात्रा 20वीं शताब्दी के आरंभ से ही देखी जा सकती है, जब स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिला अधिकारों की वकालत करने वाले आंदोलनों को गति मिली। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 20वीं शताब्दी के आरंभिक नारीवादियों ने बुनियादी अधिकारों और सामाजिक न्याय की वकालत करते हुए आधारशिला रखी। सरोजिनी नायडू और कमलादेवी चट्टोपाध्याय जैसी नेताओं ने राजनीति में महिलाओं की भागीदारी की आवश्यकता पर बन दिया। 1950 में अपनाए गए भारतीय संविधान ने अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार) और अनुच्छेद 15 (भेदभाव का निषेध) के तहत महिलाओं के लिए समान अधिकारों और अवसरों की गारंटी देकर लैंगिक समानता की नींव रखी। भारत में महिला अधिकारों का इतिहास शिक्षा, सामाजिक सुधार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के संघर्षों से बना हुआ एक ताना–बाना है। फिर भी, कई दशकों तक राजनीतिक प्रतिनिधित्व एक चुनौती बना रहा। 1917 में गठित महिला भारतीय संघ ने महिला मताधिकार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत सरकार अधिनियम 1935, जिसने महिलाओं को सीमित मतदान अधिकार प्रदान किए, एक महत्वपूर्ण कदम था हालांकि अपर्याप्त था।

स्वतंत्रता के बाद, 1950 में अपनाए गए भारतीय संविधान ने समानता और गैर–भेदभाव पर जोर दिया, जिससे महिलाओं के अधिकारों को बढ़ावा देने वाली नीतियों की नींव रखी गई। हालांकि, 1992 में 73 वें और 74 वें संवैधानिक संशोधनों के बाद ही महिलाओं को स्थानीय स्वशासन में औपचारिक आरक्षण प्राप्त हुआ, जिसमें पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए कम से कम 33% सीटें अनिवार्य की गईं। स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित करने वाले 1992 के संवैधानिक संशोधनों ने एक महत्वपूर्ण कदम आगे बढ़ाया। इस विधायी परिवर्तन ने अनगिनत महिलाओं को नेतृत्व की भूमिकाओं में आगे बढ़ने के लिए सशक्त बनाया, जिससे गांवों और नगरपालिकाओं में महिला नेताओं की एक नई पीढ़ी का उदय हुआ। हालांकि, राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर इसी तरह के प्रतिनिधित्व के लिए किए गए।

भारत में महिला आरक्षण का कानूनी स्वरूप

महिलाओं के आरक्षण को नियंत्रित करने वाला कानूनी ढांचा भारतीय संविधान में निहित है, जो समानता और न्याय के सिद्धांतों का समर्थन करता है। अनुच्छेद, और 15 कानून के समक्ष समानता पर जोर देते हैं और लिंग के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करते हैं, जबकि अनुच्छेद 46 महिलाओं सहित हाशिए पर पड़े समूहों की उन्नति को बढ़ावा देता है। इस विधेयक को विभिन्न राजनीतिक दलों और महिला संगठनों से व्यापक समर्थन मिलने के बावजूद, कई मोर्चों पर इसका कड़ा विरोध भी हुआ। आलोचकों ने तर्क दिया कि इससे महिलाओं की श्रेणी के भीतर ही हाशिए पर पड़े समूहों को बाहर किया जा सकता है, और आरक्षित उम्मीदवारों की योग्यताओं को लेकर भी चिंताएं जताईं। न्यायपालिका ने इन संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करने और सकारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता को मजबूत करने में एक अहम भूमिका निभाई है। इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ जैसे ऐतिहासिक मामलों ने समानता हासिल करने के साधन के रूप में आरक्षण के महत्व को स्थापित किया है। सुप्रीम कोर्ट ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व न केवल एक अधिकार है, बल्कि एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए एक आवश्यकता भी है। इसके अलावा, न्यायपालिका ने आरक्षण नीतियों को लागू करने में आने वाली व्यावहारिक चुनौतियों का भी समाधान किया है। के– कृष्णमूर्ति बनाम भारत संघ मामले में, कोर्ट ने समावेशी नीतियों की आवश्यकता पर जोर दिया और दोहराया कि आरक्षण का उद्देश्य सभी पृष्ठभूमि की महिलाओं को सशक्त बनाना होना चाहिए। ऐसे फैसले महिलाओं के अधिकारों को आगे बढ़ाने के प्रति न्यायपालिका की ये अनुच्छेद मिलकर लैंगिक समानता के लिए एक संवैधानिक आधार स्थापित करते हैं और सकारात्मक कार्रवाई नीतियों के लिए एक कानूनी आधार प्रदान करते हैं, जिसमें महिलाओं के लिए आरक्षण भी शामिल है। महिला आरक्षण विधेयक, जिसका उद्देश्य लोकसभा (भारत की संसद का निचला सदन) और राज्य विधानसभाओं में 33% सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित करना है, राजनीतिक प्रतिनिधित्व में लैंगिक समानता को बढ़ाने के उद्देश्य से बनाया गया एक महत्वपूर्ण कानून है। पिछले कुछ दशकों में कई रूपों में पेश किए जाने के बावजूद, यह विधेयक अभी तक पूरी तरह से पारित नहीं हो पाया है, और इस पर कई बहसें और संशोधन हुए हैं। हालाँकि, इसके मुख्य प्रावधान भारत में महिलाओं को राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने के बारे में चल रही चर्चा के केंद्र में बने हुए हैं।

महिला आरक्षण अधिनियम के प्रमुख प्रावधानों का अवलोकन

महिला आरक्षण अधिनियम, जिसे औपचारिक रूप से संविधान (108वां संशोधन) विधेयक, 2008 के नाम से जाना जाता है, भारतीय संविधान में प्रस्तावित संशोधन है जिसका उद्देश्य लोकसभा (जनता का सदन) और राज्य विधानसभाओं में 33% सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित करना है। विधेयक के प्रमुख प्रावधान नीचे दिए गए हैं, जो पारित होने पर भारत की विधायी संस्थाओं में महिलाओं को सशक्त राजनीतिक आवाज प्रदान करेंगे:

महिलाओं के लिए 33% सीटों का आरक्षण –विधेयक का मुख्य प्रावधान लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में 33% सीटें विशेष रूप से महिलाओं के लिए आरक्षित करना है। इस उपाय का उद्देश्य भारत की राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं के अल्प प्रतिनिधित्व को दूर करना और

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.030

महिलाओं को विधायी प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए अधिक समान मंच प्रदान करना है।

महिला आरक्षण विधेयक का संभावित प्रभाव

यह विधेयक भारत में व्यापक परिवर्तन ला सकता है। इसके लागू होने से राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी, जिससे महिला–केंद्रित नीतियों का निर्माण और कार्यान्वयन संभव होगा। वर्तमान में महिलाएँ राजनीतिक प्रक्रिया में अक्सर उपेक्षित रहती हैं, और यह विधेयक उनकी आवाज को मजबूत बनाने में सहायक होगा। इसके माध्यम से विधानसभाओं में लैंगिक समानता को बढ़ावा मिलेगा और निर्णय लेने की प्रक्रिया अधिक संतुलित होगी। जब नीतियों में पुरुषों और महिलाओं दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाएगा, तो समाज अधिक समावेशी और न्यायपूर्ण बनेगा। इसके अलावा, यह विधेयक संवेदनशील और महिलाओं के हितों को ध्यान में रखने वाली नीतियों को प्रोत्साहित करेगा, जिससे एक समान और सशक्त समाज का निर्माण संभव होगा। न्यायपालिका ने इन संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करने और सकारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता को मजबूत करने में एक अहम भूमिका निभाई है। इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ जैसे ऐतिहासिक मामलों ने समानता हासिल करने के साधन के रूप में आरक्षण के महत्व को स्थापित किया है। सुप्रीम कोर्ट ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व न केवल एक अधिकार है, बल्कि एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए एक आवश्यकता भी है। इसके अलावा, न्यायपालिका ने आरक्षण नीतियों को लागू करने में आने वाली व्यावहारिक चुनौतियों का भी समाधान किया है। के– कृष्णमूर्ति बनाम भारत संघ मामले में, कोर्ट ने समावेशी नीतियों की आवश्यकता पर जोर दिया और दोहराया कि आरक्षण का उद्देश्य सभी पृष्ठभूमि की महिलाओं को सशक्त बनाना होना चाहिए। ऐसे फैसले महिलाओं के अधिकारों को आगे बढ़ाने के प्रति न्यायपालिका की प्रतिबद्धता को उजागर करते हैं, साथ ही विधायी इरादे और न्यायिक सक्रियता के बीच एक नाजुक संतुलन बनाए रखते हैं।

इन न्यायिक प्रगति के बावजूद, आरक्षण नीतियों के प्रभावी कार्यान्वयन में अभी भी महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं। भ्रष्टाचार, राजनीतिक संरक्षण और अपर्याप्त जनसंपर्क प्रयासों जैसे मुद्दे अक्सर आरक्षण के इच्छित लाभों को कमजोर कर देते हैं। इसके अतिरिक्त, कई महिलाएँ अपने अधिकारों और अपने लिए उपलब्ध प्रावधानों से अनभिज्ञ रहती हैं। जो उनकी राजनीतिक भागीदारी में एक बाध ाा उत्पन्न करता है। जमीनी स्तर के आंदोलनों और नागरिक समाज संगठनों ने महिलाओं के अधि ाकारों की वकालत करने और यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है कि आरक्षण नीतियाँ प्रभावी ढंग से लागू हों। ये समूह जागरूकता बढ़ाने, महिला उम्मीदवारों का समर्थन करने और अधि ाकारियों को जवाबदेह ठहराने के लिए अथक प्रयास करते हैं। भारत में महिलाओं के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व के परिदृश्य को बदलने में उनके प्रयास अनिवार्य हैं।

महिला आरक्षण अधिनियम के मुख्य प्रावधानों का एक अवलोकन

महिला आरक्षण अधिनियम, जिसे औपचारिक रूप से संविधान (108वां संशोधन) विधेयक, 2008 के नाम से जाना जाता है, भारतीय संविधान में प्रस्तावित एक संशोधन है जिसका उद्देश्य लोकसभा (लोगों का सदन) और राज्य विधानसभाओं में 33% सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित करना है। नीचे इस विधेयक के मुख्य प्रावधान दिए गए हैं, जो यदि पारित हो जाते हैं, तो भारत के

विधायी निकायों में महिलाओं को एक मजबूत राजनीतिक आवाज के साथ सशक्त बनाएंगेः महिलाओं के लिए 33% सीटों का आरक्षण – विधेयक का प्राथमिक प्रावधान लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में 33% सीटों का विशेष रूप से महिलाओं के लिए आरक्षण है। इस उपाय का उद्देश्य भारत की राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं के कम प्रतिनिधित्व की समस्या को दूर करना और महिलाओं को विधायी प्रक्रियाओं में शामिल होने के लिए एक अधिक समान मंच प्रदान करना है।

महिलाओं के कोटे के भीतर जाति–आधारित आरक्षणों का समावेष

विधेयक स्पष्ट रूप से यह सुनिश्चित करता है कि मौजूदा जाति–आधारित आरक्षण प्रणाली अनुसूचित जातियों (SC), अनुसूचित जनजातियों (ST), और अन्य पिछड़ा वर्गों (OBC) के लिए में कोई बाधा न आए। महिलाओं के लिए 33ः कोटे के भीतर, SC, ST और OBC पृष्ठभूमि की महिलाओं को उनका संबंधित आरक्षण मिलता रहेगा। इसका अर्थ है कि इन वंचित समूहों से संबंधित महिलाओं के लिए 33% आवंटन के भीतर उनकी अपनी आरक्षित सीटें होंगी, जिससे लिंग और जाति–आधारित, दोनों तरह के कोटे में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित होगा।

15 साल की अवधि के लिए आरक्षण–लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण, कानून लागू होने के शुरुआती 15 साल तक लागू रहेगा। 15 साल बाद, संसद प्रगति और बदलते राजनीतिक माहौल के आधार पर यह तय कर सकती है कि आरक्षण जारी रहना चाहिए, उसमें बदलाव किया जाना चाहिए, या उसे पूरी तरह से हटा दिया जाना चाहिए।

स्थानीय शासन में प्रतिनिधित्व का प्रावधान–हालाँकि यह विधेयक राष्ट्रीय और राज्य–स्तरीय विधायी निकायों पर केंद्रित है, लेकिन इसमें ऐसे प्रावधान भी हैं जो स्थानीय शासन की संरचनाओं को प्रभावित करते हैं। पंचायत और नगर पालिका जैसे स्थानीय निकाय, जिनमें पहले से ही महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित हैं, अपने लिंग–आधारित कोटे को बनाए रखना जारी रखेंगे। हालाँकि, विधेयक के प्रावधान मुख्य रूप से संसद और राज्य विधानसभाओं जैसे उच्च विधायी निकायों के लिए हैं।

चुनौतियाँ और आलोचनाएँ

गहरे तक जमी हुई पितृसत्तात्मक सोच अक्सर महिलाओं के नेतृत्व की भूमिकाओं में आने का विरोध करती है। यह धारणा बनी हुई है कि राजनीतिक पदों पर महिलाएँ कम सक्षम होती हैं, जिसके कारण आरक्षण नीतियों का समाज में विरोध होता है। आलोचकों का तर्क है कि महिलाओं के लिए आरक्षण से केवल नाममात्र का प्रतिनिधित्व मिल सकता है; यानी, जो महिलाएँ चुनकर आती हैं, उनके पास शायद इतना अधिकार न हो कि वे कोई सार्थक बदलाव ला सकें। इससे राजनीतिक क्षेत्रों में महिलाओं के वास्तविक सशक्तिकरण पर सवाल उठते हैं। योग्यता (Meritocracy) और सकारात्मक कार्रवाई (Affirmative Action) के बीच का तनाव अभी भी एक विवादित मुद्दा बना हुआ है। आलोचकों का दावा है कि आरक्षण योग्यता के सिद्धांत को कमजोर करता है, जबकि इसके समर्थक तर्क देते हैं कि ऐतिहासिक रूप से असमान समाज में सभी को समान अवसर देने के लिए यह जरूरी है। भारत में महिलाओं के लिए आरक्षण नीति के सामने आने वाली चुनौतियाँ यह बताती हैं कि केवल कानूनी उपाय ही सार्थक लैंगिक समानता हासिल करने के लिए काफी नहीं हैं। एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना जरूरी है, जो कानूनी सुधारों के साथ–साथ सामाजिक बदलावों को भी

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.030

शामिल करे। इसमें शामिल हैं; जागरूकता अभियान–शासन–प्रशासन में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के महत्व के बारे में जागरूकता फैलाने से समाज की सोच बदलने और विरोध कम करने में मदद मिल सकती है(क्षमता निर्माण–शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाने के उद्देश्य से चलाए जाने वाले कार्यक्रम उनकी राजनीतिक प्रभावशीलता को बढ़ा सकते हैं, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि वे नेतृत्व की भूमिकाएँ निभाने के लिए तैयार हैं; और राजनीति में महिलाओं के लिए सहायता प्रणालियाँ स्थापित करना–जिसमें मेंटरशिप कार्यक्रम और संसाधनों तक पहुँच शामिल है–इससे शासन–प्रशासन में उनकी भागीदारी और सफलता को बढ़ावा मिल सकता है।

निष्कर्ष

भारत में महिलाओं के लिए आरक्षण नीति राजनीतिक प्रतिनिधित्व में लैंगिक समानता हासिल करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। हालाँकि, हाल के संवैधानिक संशोधनों से महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढ़ाने की प्रतिबद्धता झलकती है, फिर भी इसके कार्यान्वयन और सामाजिक स्वीकृति के मामले में अभी भी कई बड़ी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इस नीति का गहन मूल्यांकन–न्यायिक व्याख्याओं के साथ मिलकर इस बात पर जोर देता है कि एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना जरूरी है, जो कानूनी ढाँचों को सांस्कृतिक और सामाजिक बदलावों के साथ जाड़ता हो। केवल ऐसे व्यापक प्रयासों के माध्यम से ही भारत शासन–प्रशासन में वास्तविक लैंगिक समानता हासिल करने की उम्मीद कर सकता है, जिससे यह सुनिश्चित होगा कि राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की आवाज़ को न केवल सुना जाए, बल्कि उसे महत्व भी दिया जाए।

संदर्भ

1. अग्रवाल, बी. (2010), दक्षिण एशिया में लिंग और भूमि अधिकार। रूटलेज।
2. चौधरी, एस. और भाटिया, जी. (2018). महिला आरक्षण विधेयकः एक राजनीतिक विश्लेषण रूटलेज इंडिया।
3. दत्ता, के. (2015). भारत में महिलाओं के लिए आरक्षण; एक वास्तविकता जाँच। नई दिल्लीः अकादमिक फाउंडेशन।
4. कुमार, आर. (2013). महिलाओं की राजनीतिक भागीदारीः भारत और अमेरिका का तुलनात्मक अध्ययन। नई दिल्लीः ज्ञान पब्लिशिंग हाउस।
5. झा, ए. (2017). ''स्थानीय शासन में महिलाओं की भूमिकाः भारत में पंचायती राज का मामला।" जर्नल ऑफ साउथ एशियन स्टडीज, 10(2), पृ0सं0–**165–182**।
6. मेनन, एन. (2014). "भारत में महिलाओं के लिए आरक्षणः प्रगति और चुनौतियाँ।" आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 49(22), पृ0सं0–**45–52**।
7. मुखर्जी, आर. (2016). "भारत में लिंग कोटा– नीतियों और चुनौतियों की समीक्षा।" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 39(5), पृ0सं0–**373–384**।
8. सिन्हा, ए. (2019). "भारत में महिलाओं का प्रतिनिधित्वः विधान सभा का एक अध्ययन।" इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 80(2), पृ0सं0–**401–414**।